भगवान् नेमिनाथ एवं राजमती से संबंधित हिन्दी-रचनाएँ

—श्री वेदप्रकाश गर्ग

जैन धर्म भारत का प्राचीनतम धर्म है। इस धर्म के २४ तीर्थंकर भारत के विभिन्न भागों में जन्मे, साधना करके सर्वज्ञ बने और अनेक प्रदेशों में घूमकर धर्म-प्रचार किया। उन तीर्थंकरों में सर्वप्रथम भगवान् ऋषभदेव हुए, जिनके ज्येष्ठ पुत्र भरत के नाम पर इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा। भारत भूमि के 'भोगभूमि' रूप को 'कर्मभूमि' रूप में परिणत करने के कारण वर्तमान सभ्यता और संस्कृति, विद्या और कला के प्रथम पुरस्कर्ता भगवान् ऋषभदेव ही माने जाते हैं।

आदिनाथ भगवान् ऋषभदेव की परम्परा में २२वें तीर्थंकर भगवान् नेमिनाथ[1] (अन्य नाम अरिष्टनेमि) हुए। ये जैन परम्परा के अत्यन्त मान्य एवं लोकप्रिय तीर्थंकर हुए हैं। इनका जन्म ब्रज प्रदेश के शौरीपुर[2] नामक नगर में हुआ था, जो आज भी जैन तीर्थ के रूप में विख्यात है और समय-समय पर जैन यात्री भगवान् नेमिनाथ जी की इस जन्मभूमि की यात्रा करके अपना अहोभाग्य मानते हैं। उनके कारण ही यह प्रदेश सभी जैन धर्मावलम्बियों द्वारा सदा से पुण्य स्थल माना जाता रहा है। इनके पिता यदु-वंश के राजा समुद्रविजय थे[3] और इनकी माता का नाम शिवादेवी था। इनकी बाल्यावस्था में ही यादवगण पश्चिमी समुद्र के किनारे सौराष्ट्र में द्वारकापुरी में चले गये थे। वासुदेव कृष्ण इनके चचेरे भाई थे।

नेमिप्रभु बड़े पराक्रमी थे। इनका विवाह राजा उग्रसेन[4] की बेटी राजमती (राजुल)[5] से होना निश्चित हुआ था, किन्तु जब बारात लेकर वे राजुल को ब्याहने पहुंचे तो बहुत-से पशु-पक्षियों को एक बाड़े में चीत्कार करते देखकर अपने साथियों से पूछा कि इतने पशु-पक्षियों को यहां क्यों एकत्र किया गया है और ये क्रन्दन क्यों कर रहे हैं? तब सारथी ने कहा कि ये मांस-प्रेमी बरातियों के भोजनार्थ एकत्रित किये गये हैं और मरने के भय से चीत्कार कर रहे हैं। यह सुनकर नेमिनाथ जी का परम अहिंसक हृदय तड़प उठा। वे संसार की इस मांसाहारी वृत्ति और भोग-लिप्सा के इस नारकीय दृश्य को देखकर लोकोत्तर विरक्ति से भर गये। उन्होंने अपने पिता

१. इन्होंने 'शंख' के जन्म में तीर्थंकरत्व की साधना की थी। यही शंख जन्मान्तर में तीर्थंकर नेमिनाथ हुए। इनकी जन्म-तिथि किसी ने श्रावण पंचमी और किसी ने कार्तिक कृष्णा द्वादशी लिखी है। आषाढ़ शुक्ला अष्टमी इनकी निर्वाण तिथि मानी जाती है। निर्वाण स्थल 'उर्जयन्त' गिरनार (जिसे रेवन्तगिरि भी कहते थे), चैत्य वृक्ष वेतस तथा चिह्न शंख है।

२. बटेश्वर नामक ग्राम से लगभग एक मील दूर यह शौरीपुर जैन तीर्थ दिगम्बर और श्वेताम्बर दोनों संप्रदायों को मान्य है। दोनों के यहां मन्दिर बने हुए हैं जिनमें से दिगम्बर मंदिर में कई प्राचीन मूर्तियां और अवशेष प्राप्त हैं। पुरातत्व की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण अनेक प्राचीन वस्तुएं शौरीपुर ध्वंसावशेषों से प्राप्त हुई हैं। कनिंघम ने यहाँ से ऐसी अनेक वस्तुओं का संग्रह किया था। किसी-किसी ने द्वारावती में ही इनका जन्म होना लिखा है।

३. ५वीं शती के लगभग गणिवाचक संघदास द्वारा रचित 'वसुदेव हिंडि' नामक प्राचीन कथा-ग्रंथ में लिखा है कि हरिवंश में शौरी और वीर नामक दो भाई हुए। जिनमें शौरी ने शौरीपुर और वीर ने सौवीर नामक नगर बसाया। शौरी के पुत्र अन्धक वृष्णि के भद्रारानी से समुद्रविजय आदि १० पुत्र हुए और कुंती व माद्री दो कन्यायें हुईं। वीर के पुत्र भोज वृष्णि हुए। उनका पुत्र उग्रसेन हुआ और उग्रसेन के बन्धु, सुबन्धु एवं कंस आदि ६ पुत्र हुए। इनमें से समुद्रविजय ने शौरीपुर में और उग्रसेन एवं कंस ने मथुरा का राज्य किया। समुद्रविजय के पुत्र अरिष्टनेमि या नेमिनाथ हुए, जो आगे चलकर २२वें तीर्थंकर कहलाये। समुद्रविजय के छोटे भाई वसुदेव के पुत्र श्रीकृष्ण हुए जिन्होंने कंस को मार कर मथुरा का राज्य लिया, किन्तु मगध के पराक्रमी राजा जरासंध के भय से कृष्ण और समुद्रविजय को यादवों के साथ वहाँ से प्रयाण करना पड़ा। वे पश्चिमी समुद्र तटवर्ती सौराष्ट्र प्रदेश में पहुंचे और वहां द्वारिका नगरी बसाकर यादवों सहित श्रीकृष्ण ने लम्बे समय तक राज्य किया।

समुद्रविजय के पश्चात् अरिष्टनेमि ही यादव राज्य के वास्तविक उत्तराधिकारी थे किन्तु युवावस्था में ही विरक्त हो जाने के कारण इन्होंने राज्याधिकार का त्याग किया था। उसके फलस्वरूप वसुदेव और फिर कृष्ण बलराम शौरीपुर के अधिपति हुए थे।

४. उग्रसेन को किसी ने मथुरा का राजा लिखा है और किसी ने उन्हें जूनागढ़ का अधिपति बतलाया है।

५. किसी-किसी ने इन्हें भोज-पुत्री भी लिखा है अर्थात् उग्रसेन की बहन।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से कहा कि "मेरे विवाह के निमित्त इतने पशु-पक्षी मारे जायें, ऐसा विवाह मुझे नहीं करना है। अब विवाह करूंगा तो बस मुक्ति-वधू से।" सभी लोगों ने उन्हें बहुत समझाया, पर दयालु नेमिनाथ जी ने जो निश्चय किया, वह कह दिया, उससे टस से मस नहीं हुए। उन्होंने विवाह-परिधान उतार फेंके। वे उन निरीह जीवों की हिंसा की आशंका से इतने द्रवीभूत हुए कि वे उसी समय विरक्त होकर और राजमती को अनब्याही छोड़कर बिना किसी की प्रतीक्षा किये द्वारका की ओर मुड़ चले तथा उर्जयन्त गिरि पर जा दीक्षा लेकर तपस्या करने लगे। चौवन दिन तक तपस्या करने के बाद उन्हें कैवल्य की प्राप्ति हो गई।[1] उनकी धर्म-सभाओं का आयोजन होने लगा। बहुत वर्षों तक धर्मोपदेश देकर अन्त में गिरनार पर्वत पर सुदीर्घ तपश्चरण के पश्चात् तीर्थंकर नेमिनाथ[2] जी ने मोक्ष प्राप्त किया। इस प्रकार उन्होंने जैन धर्म के मूल सिद्धान्त 'अहिंसा' और 'तप' को चरितार्थ कर श्रमण परम्परा की पुष्टि की थी।

राजमती सच्चे मन से नेमिनाथ को वर चुकी थी। वह परम पतिव्रता थी। अतः जब उसे अपने भावी प्राणनाथ की विरक्ति का पता चला तो बहुतों के समझाने पर भी वह दूसरे से विवाह करने के प्रस्ताव से सहमत नहीं हुई और नेमिनाथ के पास गिरनार पहुंचकर उन्हीं से दीक्षा ग्रहण कर तपस्विनी बन गई। इस प्रकार राजमती ने एक बार मन से निश्चित किये हुए पति के अतिरिक्त किसी से भी विवाह न कर अपने पति का अनुगमन करके महान् सती का आदर्श उपस्थित किया। जैन समाज में जिस तरह भगवान् नेमिनाथ का स्मरण व स्तवन किया जाता है, उसी प्रकार २४ महासतियों में राजमती का पवित्र नाम भी प्रातःस्मरणीय है।

अब से कुछ समय पूर्व तक इतिहासकार श्री नेमिनाथ जी की ऐतिहासिकता पर विश्वास नहीं करते थे, किन्तु ऐसा नहीं है। कितने ही इतिहासज्ञ एवं पुरातत्वज्ञ अब उनके ऐतिहासिक होने में सन्देह नहीं करते। नेमिनाथ श्रीकृष्ण के ताऊजात भाई थे और श्रीकृष्ण की ऐतिहासिकता असंदिग्ध है। अतः नेमिनाथ जी को ऐतिहासिक महापुरुष न मानने का कोई कारण-विशेष प्रतीत नहीं होता। वे भी अपने चचेरे भाई कृष्ण की तरह ही ऐतिहासिक महापुरुष हैं। दोनों का समय महाभारत-युद्ध-पूर्व है[3], उसे ही कृष्ण-काल कहा जाता है।

श्रीकृष्ण किस काल में विद्यमान थे, इस विषय में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। आधुनिक विद्वान् इतिहास और पुरातत्व के जिन अनुसंधानों के आधार पर कृष्ण-काल को ३५०० वर्ष से अधिक पुराना नहीं मानते वे एकांगी और अपूर्ण हैं।[4] भारतीय मान्यता के अनुसार वह ५००० वर्ष से भी अधिक प्राचीन है। यह मान्यता कोरी कल्पना अथवा किंवदंती पर आधारित नहीं है, अपितु इसका वैज्ञानिक और ऐतिहासिक आधार है। ज्योतिष, पुरातत्व और इतिहास के प्रमाणों से परिपुष्ट इस भारतीय मान्यता को न स्वीकारने का कोई कारण नहीं है। अतः नेमिनाथ जी का समय भी यही है।

नेमिनाथ जी की ऐतिहासिकता का एक पुरातात्विक प्रमाण भी प्राप्त हुआ है। डा० प्राणनाथ विद्यालंकार ने १९ मार्च, १९५५ के साप्ताहिक 'टाइम्स आफ इण्डिया' में काठियावाड़ से प्राप्त एक प्राचीन ताम्र शासन पत्र का विवरण प्रकाशित कराया था। उनके अनुसार इस दान-पत्र पर अंकित लेख का भाव यह है कि सुमेर जाति में उत्पन्न बाबुल के खिल्दियन सम्राट् नेबुचेद नजर ने जो रेवा नगर (काठियावाड़) का अधिपति है, यदुराज की इस भूमि (द्वारका) में आकर रेवाचल (गिरनार) के स्वामी नेमिनाथ की भक्ति की तथा उनकी सेवा में दान अर्पित किया।" इस पर उनकी मुद्रा भी अंकित है। उनका काल ११४० ई० पू० अनुमान किया जाता है। इस दान पत्र की उपलब्धि के पश्चात् तो नेमिनाथ जी की ऐतिहासिकता एवं समय पर सन्देह करने का कोई कारण ही शेष नहीं रहता।[5]

---

१. कैवल्य-प्राप्ति के बाद अरिष्टनेमि ही नेमिनाथ कहलाये और उन्हें तीर्थंकर माना गया। इनके कारण शूरसेन प्रदेश और कृष्ण का जन्मस्थान मथुरा नगर जैन धर्म के तीर्थ-स्थल माने जाने लगे।

२. आध्यात्मिक विकास के उच्चतम शिखर पर पहुँचने वाले महापुरुषों को जैन धर्म में तीर्थंकर कहा जाता है। तीर्थंकर राग-द्वेष, भय, आश्चर्य, क्रोध, मान, माया, लोभ, चिन्ता आदि विकारों से सर्वथा रहित होते हैं तथा केवलदर्शन और केवलज्ञान से युक्त होते हैं।

३. कुछ महानुभावों का अनुमान है कि जिन अरिष्टनेमि का नामोल्लेख वेदों में हुआ है, वे ये ही २२वें तीर्थंकर नेमिनाथ जी हैं। इसी प्रकार का अनुमान कुछ विद्वान् श्रीकृष्ण के संबंध में भी करते हैं, किन्तु ऐसा सोचना ठीक नहीं है। ऋग्वेद में उल्लिखित अरिष्टनेमि तथा कृष्ण २२वें तीर्थंकर नेमिनाथ तथा उनके चचेरे भाई श्रीकृष्ण नहीं हो सकते, क्योंकि इन दोनों का समय महाभारतकालीन है और ऋग्वेद भारत का ही नहीं समस्त संसार का प्राचीनतम ग्रंथ है। जब उसके सूत्रों की रचना नेमिनाथ एवं कृष्ण से पहले हुई तब उसमें परवर्ती इन दोनों का नामोल्लेख कैसे संभव हो सकता है। अतः ऋग्वेद के अरिष्टनेमि तथा कृष्ण इन दोनों से भिन्न कोई वैदिक ऋषि जान पड़ते हैं।

४. इस बात की पूरी संभावना है कि ऐसे अनुसंधानों के पूर्ण होने पर वे भी इस संबंध में भारतीय मान्यता का ही समर्थन करेंगे।

५. कुछ लोगों का अनुमान है कि तीर्थंकर नेमिनाथ जी के ही समय में 'ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती' भी हुए। अतः विद्वानों को इस संबंध में शोधात्मक प्रकाश डालना चाहिये।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नेमिनाथ जी[1] के माध्यम से भारतीय जीवन में अहिंसक वृत्ति का ऐतिहासिक परिधि के अन्तर्गत प्राप्त होने वाला यह उत्तम उदाहरण है।

नेमिनाथ और राजुल के इस वैवाहिक प्रसंग को लेकर जैन मुनियों और विद्वानों ने विपुल साहित्य का निर्माण किया है। राजमती के विरह की कल्पना को लेकर साहित्य के 'चउपई' 'विवाहला' 'बेलि', 'रासो', 'फाग' आदि विभिन्न काव्य-रूपों में पचासों बारहमासे, सैकड़ों गीत, भजन, स्तवन, स्तुति आदि रचे गये। उन दोनों से संबंधित सभी जैन काव्य विरह काव्य हैं। उनमें राजुल के विरह का वर्णन है। राजुल विरहिणी थी उस पति की जो सदा के लिए वैराग्य धारण कर तप करने गिरिनार पर्वत पर चला गया था। अतः उसका विरह काम का पर्यायवाची नहीं था। उसमें विलासिता की गंध भी नहीं है।

भगवान् नेमिनाथ और सती राजुल के प्रसंग को लेकर शृंगार रस की रचनायें भी जैन कवियों ने रचीं, परन्तु उनमें संयम-पूर्ण मर्यादा का ही पुट देखने को मिलता है। उनका उद्देश्य भी मानव को आत्मज्ञानी बनाने का था। इसीलिए उन दोनों को लेकर लिखे गये मंगलाचरण सात्विकता से संयुक्त हैं। साहित्य-शास्त्र ग्रन्थों में विरह की जिन दशाओं का निरूपण किया गया है, वे सभी राजुल के जीवन में विद्यमान हैं। विरह में प्रिय से मिलने की उत्कण्ठा, चिन्ता अथवा प्रियतम के इष्ट-अनिष्ट की चिन्ता, स्मृति, गुण-कथन आदि सभी नैसर्गिक ढंग से दिखलाये गये हैं।

भगवान् नेमिनाथ का चरित्र आरम्भ से ही कवियों के लिए अधिक आकर्षक रहा है। इनके जीवन पर आधारित विपुल एवं विशिष्ट साहित्य उपलब्ध है। नेमिनाथ एवं राजुल के विवाह प्रसंग और दीक्षित होने के बाद राजमती को परीक्षा का विशिष्ट प्रसंग प्राचीन जैनागम 'उत्तराध्ययन सूत्र' के २२ वें 'रहनेमिज अध्ययन' में पाया जाता है। यह सर्वाधिक प्राचीन और प्रसिद्ध ग्रन्थ है। इसके ही कथानक आकार से जैन पुराणों का प्रणयन हुआ है, जिनमें जिनसेन प्रथम का 'हरिवंश पुराण' तथा गुणभद्र का 'उत्तरपुराण' नेमिनाथ जी के जीवन-वृत्त से संबंधित मुख्य स्रोत हैं। इन मुख्य आधारग्रन्थों के अतिरिक्त और भी उपजीव्य ग्रन्थ हैं, जिनमें नेमि-चरित की प्रमुख रेखाओं के आधार पर भिन्न-भिन्न शैली में उनके जीवनवृत्त का निर्माण किया गया है। यही कारण है कि जैनसाहित्य में नेमिनाथ-राजमती के उपाख्यान से संबंधित अनेक ग्रन्थ उपलब्ध हैं।[2]

नेमि प्रभु एवं राजुल के लोकविख्यात चरित पर आधारित प्राकृत, संस्कृत एवं अपभ्रंश में अनेक ग्रन्थों का प्रणयन विभिन्न काव्यरूपों में हुआ है। इन भाषाओं के काव्यरूपों की सामान्य पृष्ठभूमि को रिक्थ रूप में ग्रहण करते हुए प्रारम्भ से ही देश भाषा हिन्दी में भी इस प्रसंग-विशेष को लेकर अनेक रचनायें काव्यबद्ध हुईं। यद्यपि प्राकृत, संस्कृत तथा अपभ्रंश के अनेक कवि इस प्रसंग को अपने काव्यों का विषय बना चुके थे, किन्तु हिन्दी रचनाकारों को भी पूर्व कवियों की तरह ही यह कथानक अत्यधिक प्रिय एवं रुचिकर रहा है।[3]

हिन्दी साहित्य के आदि काल से ही नेमिनाथ एवं राजुल के इस प्रसंग विशेष[4] से संबंधित विभिन्न काव्यरूपों में निबद्ध रचनायें मिलनी प्रारम्भ हो जाती हैं और यह कथानक-परम्परा अपने अक्षुण्ण रूप में आधुनिक काल तक पहुंचती है। वर्तमान काल में इस रोचक प्रसंग को लेकर पद्यात्मक रचनाओं के साथ-साथ गद्यात्मक रचनायें भी लिखी गई हैं। इन सभी रचनाओं का कथानक परम्परा-गत रूप में प्राप्त वही सुप्रसिद्ध लोकप्रिय चरित है, जिसमें २२ वें तीर्थंकर नेमिनाथ जी का जीवन अत्यधिक रोचक ढंग से निबद्ध है तथा राजमती की विरहवेदना का करुण कथन हुआ है।

इन समस्त कृतियों में जिनेश्वर नेमिनाथ काव्य-नायक हैं। उनका सम्पूर्ण चरित्र पौराणिक परिवेश में आबद्ध है और विरचित के केन्द्रबिन्दु के चारों ओर घूमता है। वे वीतरागी हैं। यौवन की मादक अवस्था में भी वैषयिक सुख उन्हें आकृष्ट एवं अभिभूत

---

१. २२वें तीर्थंकर नेमिनाथ के नाम पर नेमि संप्रदाय भी प्रचलित हुआ था जो कभी समूचे दक्षिण भारत में फैला था किन्तु कालान्तर में वह नाथ संप्रदाय में अन्तर्मुक्त हो गया। वैसे उसका नाममात्र का प्रचार एवं उल्लेख अब तक मिलता है।

२. तीर्थंकर होने के नाते नेमिनाथ विषयक तथा महासती के नाते राजुल संबंधी स्तवन, मंगलाचरण आदि स्तुतिपरक विभिन्न रचनोल्लेख भी पर्याप्त मात्रा मे मिलते हैं। किन्तु इस लेख में मात्र ऐसे उल्लेख को शामिल नहीं किया गया है।

३. भारत की अन्य भाषाओं में भी नेमिनाथ एवं राजुल के इस वैवाहिक प्रसंग को लेकर प्रचुर मात्रा में साहित्य-सर्जन हुआ है।

४. इस प्रसंग-विशेष को लेकर गीतिकाव्य अधिक रचे गये, यद्यपि प्रबंध काव्य भी रचे गये किन्तु उनकी संख्या अल्प है। हिन्दी के जैन खण्डकाव्य अधिकांशतया नेमि और राजमती की कथा से संबद्ध हैं। उनके जीवन से संबंधित खण्डकाव्य में प्रेम-निर्वाह को पर्याप्त अवसर मिला है। उन्हें लेकर जैन कवि प्रेमपूर्ण सात्विक भावों की अनुभूति करते रहे हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नहीं कर पाते। विवाहोत्सव में भोजनार्थ वध्य पशुओं का आर्त्त क्रन्दन सुनकर उनका निर्वेद प्रबल हो जाता है और वे वैवाहिक कर्म को बीच में ही छोड़ कर प्रव्रज्या ग्रहण कर लेते हैं। अदम्य काम-शत्रु को पराजित कर उनकी साधना की परिणति कैवल्य प्राप्ति में होती है और वे तीर्थंकर पद को प्राप्त करते हैं।

इसी प्रकार राजमती दृढ़निश्चयी सती नायिका है; वह शीलसम्पन्न तथा अतुल रूपवती है। उसे नेमिनाथ की पत्नी बनने का सौभाग्य मिलने वाला था, किन्तु क्रूर विधि ने निमिष मात्र में ही उसकी नवोदित आशाओं पर पानी फेर दिया। विवाह में भावी व्यापक हिंसा से उद्विग्न होकर नेमिनाथ दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं। इस अकारण निराकरण से राजुल स्तब्ध रह जाती है। बंधुजनों के समझाने-बुझाने से उसके तप्त हृदय को सान्त्वना तो मिलती है; किन्तु उसका जीवन-कोश रीत चुका है। वह मन से नेमिनाथ को सर्वस्व अर्पित कर चुकी थी, अतः उसे संसार में अन्य कुछ भी ग्राह्य नहीं। जीवन की सुख-सुविधाओं तथा प्रलोभनों का तृणवत् परित्याग कर वह तप का कंटीला मार्ग ग्रहण करती है और केवलज्ञानी नेमि प्रभु से पूर्व परम पद पाकर अद्भुत सौभाग्य प्राप्त करती है।

प्रस्तुत लेख में नेमिनाथ एवं राजमती से संबंधित यथासंभव ज्ञात सभी हिन्दी-रचनाओं का विवरण देना भी अप्रासंगिक न होगा। कृतियों का यह विवरण विक्रम-शती के काल-क्रमानुसार है—

भगवान् नेमिनाथ एवं राजमती के जीवन प्रसंग पर आधारित देश भाषा (हिन्दी) में लिखी संभवतः सबसे पहली रचना कवि श्री विनयचन्द सूरि द्वारा विक्रम की १४ वीं शताब्दी के मध्य में रचित[1] 'नेमिनाथ चउपई' मिलती है। इसमें राजमती के वियोग का वर्णन कवि ने अपूर्व तल्लीनता एवं काव्यात्मकता के साथ किया है। आदिकालीन हिन्दी साहित्य की यह अत्यन्त प्रसिद्ध तथा महत्त्वपूर्ण कृति है। कवि पाल्हण ने विक्रम १४ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में 'नेमिनाथ बारहमासा रासो' की रचना की थी। यह रचना अपूर्ण प्राप्त है।[2] रचना की भाषा सरल, सरस और व्यवहृत भाषा है। प्राप्य पद्यों से पता चलता है कि कवि ने रचना मे बारह मासों का स्वाभाविक एवं सुन्दर वर्णन किया होगा। १४ वीं शताब्दी में ही 'पद्मकवि' द्वारा रचित 'नेमिनाथ फागु'[3] नामक एक रचना का और उल्लेख मिलता है। संभवतः यह राजस्थानी हिन्दी की रचना है। इसी शताब्दी में कवि समुधर कृत 'नेमिनाथ फागु' की प्रति भी संप्राप्य है।

श्री राजशेखर सूरि ने 'नेमिनाथ फागु' नामक कृति को छन्दोबद्ध किया। इसका रचना काल विक्रमी सम्वत् १४०५ के लगभग माना जाता है। इसमें नेमिनाथ और राजुल की कथा का काव्यमय निरूपण हुआ है। यह २७ पद्यों का छोटा-सा खण्डकाव्य है। कवि कान्ह द्वारा विक्रमी १५ वीं शताब्दी में फागरूप में 'नेमिनाथ फाग बारह मासा' नामक रचना उपलब्ध होती है। इसमें फाग और बारहमासा दोनों काव्यरूपों के गुण विद्यमान हैं। रचना काव्यात्मक तथा पर्याप्त सरस है। पूरा काव्य बड़ा ही करुण बन पड़ा है। श्री हीरानन्द सूरि ने भी विक्रमी १५ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में एक 'नेमिनाथ बारहमासा' की रचना की थी, जिसकी प्रति अभय जैन ग्रन्थालय, बीकानेर में सुरक्षित होना बतलाया जाता है।

भट्टारक सकल कीर्ति (जन्म सम्वत् १४४३ मृत्यु सम्वत् १४९९) की 'नेमिश्वर गीत' नामक एक रचना सुलभ है, जिसमें राजमती एवं नेमिनाथ के वियोग का वर्णन है। यह संगीत-प्रधान रचना है। श्री सोमसुन्दर सूरि (रचनाकाल वि० सं० १४५०-१४९९) ने 'नेमिनाथ नवरस फागु' नामक रचना का प्रणयन संभवतः सं० १४८१ में किया था। इसकी भाषा संस्कृत, प्राकृत और गुजराती मिश्रित हिन्दी है। यह एक छोटा काव्य है। उपाध्याय जयसागर (रचनाकाल वि० सं १४७८-१४९५) जिन्होने जिनराज सूरि से दीक्षा ली थी, ने नेमिनाथ विवाहलों की रचना की थी।[4] ब्रह्म जिनदास भट्टारक सकलकीर्ति के प्रमुख शिष्य थे। इन्होने 'नेमीश्वर रास' नामक रचना लिखी है जिस पर गुजराती का प्रभाव है। इनका समय १५वीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध और १६वीं का पूर्वार्द्ध है।

---

१. इसका रचना-काल विवादास्पद है। इसका समय सं० १३५३ से सं० १३५८ के बीच कहीं हो सकता है। इस रचना से पहले की एक और रचना सुमतिगणि द्वारा सं० १२९० में रचित 'नेमिनाथ रास' मिलती है किंतु इसकी भाषा के संबंध में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। कोई इसे देश भाषा की रचना कहता है और कोई अपभ्रंश की रचना मानता है। नेमिनाथ चउपई का प्रकाशन सन् १९२० में 'प्राचीन गुर्जर काव्य संग्रह' में हुआ था।

२. इस रचना की प्रति १५वीं शताब्दी की उपलब्ध है और श्री अभय जैन ग्रन्थालय बीकानेर में सुरक्षित है। रचना में सिर्फ पौने सात पद्य हैं।

३. 'फागु' एक प्रकार का लोकगीत है जो बसंत ऋतु में गाया जाता था। आगे चलकर उसका प्रयोग आनन्द-वर्णन और सौन्दर्यनिरूपण में होने लगा।

४. १५वीं शताब्दी की इन रचनाओं का उल्लेख भी प्राप्त होता है—जयसिंहसूरि कृत 'प्रथम एवं द्वितीय नेमिनाथ फागु,' जयशेखर कृत 'नेमिनाथ फागु', रत्नमण्डल गणि कृत 'नेमिनाथ नवरस फागु,', समराकृत, 'नेमिनाथ फागु,' समधर कृत, 'नेमिनाथ फागु', जिनरत्न सूरि कृत 'नेमिनाथ स्तवन', सोमसुन्दर सूरि शिष्य कृत 'नेमिनाथ नवभव स्तवन', जयशेखरसूरि कृत 'नेमिनाथ धवल,' माणिक्यसुन्दर सूरि कृत 'नेमिश्वर चरित फाग बंध'

विवाह के वर्णन-प्रधान काव्यों की संज्ञा 'विवाह,' 'विवाहउल,' 'विवाहलो' और 'विवाहला' पाई जाती है किन्तु भक्तिपरक कृतियों में भौतिक विवाह 'विवाहला' नहीं कहलाता। जब आराध्य देव दीक्षाकुमारी संयमश्री या मुक्तिवधू का वरण करता है, तो वह इन संज्ञाओं से अभिहित होता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कवि ठक्कर[1] (रचना काल सं० १५७५ से १५९० तक) की 'नेमिराजमति वेलि'[2] नामक एक हिन्दी राजस्थानी की रचना प्राप्त होती है। रचना लघु होते हुए भी भाषा एवं वर्णन शैली की दृष्टि से उत्तम है। वाचकमति शेखर (समय १६ वीं शताब्दी) ने 'नेमिनाथ बसन्त फुलड़ा फाग' (गाथा १०८) तथा 'नेमिगीत' नामक दो कृतियों की रचना की। लावण्य (जन्म सं० १५२१ मृत्यु सं० १५८९) ने 'नेमिनाथ हमचडी' की रचना सं० १५६२ में की थी। इसके अतिरिक्त 'रंग रत्नाकर नेमिनाथ प्रबन्ध' नामक एक अन्य रचना भी इनकी मिलती है। ब्रह्म बूचराज (रचनाकाल सं० १५३० से १६०० तक) कृत 'नेमिनाथ वसेतु' तथा 'नेमीश्वर का बारह-मासा' नामक दो हिन्दी रचनायें मिलती हैं। दोनों कृतियां सुन्दर हैं। ब्रह्म यशोधर (समय सं० १५२० से १५९० तक) ने नेमिनाथ पर 'नेमिनाथ गीत' नाम से तीन गीत लिखे हैं, किन्तु तीनों ही गीतों में अपनी-अपनी विशेषतायें है। इनकी काव्य शैली परिमार्जित है। इनमें से एक 'नेमिनाथ गीत' का रचना काल सं० १५८१ है।

चतरूमल कवि[3] ने सं० १५७१ में 'नेमीश्वरगीत' की रचना की थी। यह एक छोटा-सा गीत है। इस गीत का संबंध भगवान् नेमीश्वर और राजुल के प्रसिद्ध कथानक से है। ब्रह्म जयसागर, भ० रत्नकीर्ति के प्रमुख शिष्यों में से थे। इनका समय सं० १५८० से १६६५ तक का माना जाता है। इनकी 'नेमिनाथगीत' नामक एक महत्त्वपूर्ण रचना प्राप्य है।

ब्रह्म रायमल १७ वीं शती के विद्वान् हैं। इनकी सं० १६१५ में रचित 'नेमिश्वर रास' नामक रचना प्राप्त है। यह गीतात्मक शैली में लिखी हुई है। सं० १६१५ में ही रचित ब्रह्म विनयदेव सूरि की कृति 'नेमिनाथ विवाहलो' (धवलढाल ४४) नामक एक अन्य रचना भी प्राप्त होती है। भट्टारक शुभचन्द्र भट्टारक विजयकीर्ति के शिष्य थे। ये सं० १६१३ तक भट्टारक पद पर बने रहे थे। 'नेमिनाथ छन्द' नामक इनकी रचना मिली है। साधुकीर्ति के गुरुभ्राता कनकसोम (रचना काल वि० १७ वीं शती का पूर्वार्द्ध) जो अच्छे कवि थे, की 'नेमिनाथ फाग' नामक एक रचना प्राप्त है। हर्षकीर्ति राजस्थान के जैन संत थे। ये आध्यात्मिक कवि थे। 'नेमि राजुल गीत' तथा 'नेमीश्वर गीत' नामक कृतियाँ इनकी आध्यात्मिक रचनायें हैं।

भट्टारक वीरचन्द्र प्रतिभासम्पन्न विद्वान् थे। ये भ० लक्ष्मीचन्द्र के शिष्य थे। इनका समय १७ वीं शती का उत्तरार्द्ध है। 'वीर विलास फाग' नामक खण्ड काव्य में तीर्थंकर नेमिनाथ जी की जीवनघटना का वर्णन किया गया है। इसमें १३७ पद्य हैं। इसके अतिरिक्त 'नेमिकुमार रास' (रचना सं० १६७३) नामक एक अन्य रचना नेमिनाथ जी की वैवाहिक घटना पर आधारित एक लघु कृति है। कवि मालदेव (रचना काल सं० १६६८) कृत 'राजुल नेमि धमाल' (पद्य ६३) और 'नेमिनाथ नवभव रास' (पद्य २३०) नामक दो रचनायें प्राप्त हैं। कवि मालदेव आचार्य भावदेव सूरि के शिष्य थे।

भट्टारक रत्नकीर्ति (रचना काल सं० १६०० से १६५६ तक) भट्टारक अभयनन्दि के पट्ट शिष्य थे। इनकी 'नेमिनाथ फागु' नामक रचना जिसमें ५१ पद्य हैं, नेमीश्वर-राजुल के इसी प्रसिद्ध कथानक से संबंधित है। इन्हीं की 'नेमि बारहमासा' नामक एक और लघु कृति है, जिसमें १२ त्रोटक छन्द हैं। इसमें राजुल के विरह का वर्णन हुआ है। इनके अतिरिक्त उनके रचे ३८ पद भी इसी कथानक से संबंधित हैं।

कुमुदचन्द्र (रचनाकाल सं० १६४५ से १६८७ तक) भट्टारक रत्नकीर्ति के शिष्य थे। ये अच्छे साहित्यकार थे। इनका 'नेमिजिन गीत' नेमीश्वर और राजुल के प्रसिद्ध कथानक से सम्बन्धित है। इसके अलावा 'नेमिनाथ बारहमासा' प्रणय गीत और 'हिण्डोलना गीत' भी उसी कथानक पर आधारित हैं, जिनमें राजुल का विरह मुखर हो उठा है। इसी कथानक पर ८७ पद्यों की इनकी 'नेमीश्वर हमची' नामक एक और रचना मिलती है।

हेमविजय (उपस्थितिकाल सं० १६७०) विजयसेन सूरि के शिष्य थे। ये हिन्दी के भी उत्तम कवि थे। 'नेमिनाथ के पद' उनकी प्रौढ़ कवित्व-शक्ति को प्रकट करने में समर्थ है। उनके पदों में हृदय की गहरी अनुभूति है। पाण्डे रूपचन्द्र (रचना काल सं० १६८० से १६९४ तक) कृत 'नेमिनाथ रासा' एक सुन्दर कृति है। ये हिन्दी के एक सामर्थ्यवान कवि थे। उनकी भाषा का प्रसाद गुण आनन्द उत्पन्न करता है, जो सीधे-सीधे भाव-मर्म को रसविभोर बना देता है। महिम सुन्दर ने भी सं० १६६५ में 'नेमिनाथ विहालो' नामक एक कृति की रचना की थी।

---

१. कवि ठक्कुर अपभ्रंश के एक अन्य कवि ठकुरसी से भिन्न हैं।

२. 'वेलि' शब्द संस्कृत के 'वल्ली' और प्राकृत के 'वेलि' से समुद्भूत हुआ है। यह वृक्षलतावाची है। जैनों का वेलिसाहित्य बहुत ही समृद्ध है।

३. कवि गढ़ गोपाचल का रहने वाला था। उस समय वहाँ मानसिंह तोमर का राज्य था।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

हर्षकीर्ति, (रचनाकाल सं० १६८३) हिन्दी के कवि थे। इन्होंने छोटी-छोटी मुक्तक रचनाओं का निर्माण किया है। उनमें सरसता एवं गतिशीलता है। 'नेमिनाथ राजुल गीत', 'मोरड़ा' तथा 'नेमिश्वर गीत' इन सभी में नेमिनाथ और राजुल को लेकर विविध भावों का प्रदर्शन हुआ है। ये सभी भगवद्विषयक रति से संबंधित गीत-काव्य हैं।

जिन समुद्र सूरि[1] कृत 'नेमिनाथ फाग' नामक रचना सं० १६९७ की मिलती है। यह कवि की सर्वप्रथम रचना है जिसमें नेमिनाथ का जीवन अत्यधिक रोचक ढंग से निबद्ध है। कविवर जिनहर्ष[2] (काल सं० १७०४ से १७६३ तक) कृत 'नेमि चरित्र' नामक एक रचना का उल्लेख प्राप्त होता है। इन्हीं कविवर के नाम से 'नेमि राजमती बारहमास सवैया' तथा 'नेमि बारहमासा' नामक दो बारहमासे भी मिलते हैं। इनके पदों में 'जसराज' नाम की छाप मिलती है। 'जसराज' कविवर का पूर्व नाम है और 'जिनहर्ष' दीक्षित अवस्था का नाम है।

पाण्डे हेमराज (रचना काल सं० १७०३ से १७३० तक) कृत 'नेमि राजमति जखड़ी' नामक एक रचना मिलती है। विश्वभूषण जी (रचना काल सं० १७२९) का रचा हुआ 'नेमिजी कामंगल' मिलता है। कवि ने इसकी रचना सं० १६९८ में सिकन्दराबाद के 'पार्श्व जिन देहुरे' में की थी। यह एक छोटा-सा गीतिकाव्य है। भट्टारक धर्मचन्द्र का पट्टाभिषेक मारोठ में सं० १७१२ में हुआ था। ये नागौर गादी के भट्टारक थे। इन्होंने संस्कृत के साथ-साथ हिन्दी में भी काव्य-रचना की है। इनकी 'नेमिनाथ बीनती' नामक रचना मिलती है। कवि भाऊ द्वारा रचित 'नेमिनाथ रास' एक उत्तम कृति है। इसमें १५५ पद्य हैं। कवि का समय सं० १६९६ से पूर्व का है। इस रास का संबन्ध नेमिनाथ की वैराग्य लेने वाली घटना से है।

लक्ष्मीबल्लभ (समय १८ वीं शती का दूसरा पाद) लक्ष्मी कीर्ति जी के शिष्य थे। उनकी 'नेमि-राजुल बारह मासा' एक प्रौढ़ रचना है, जो सवैयों में लिखी गई है। इसमें कुल १४ पद्य हैं। रचना भगवान् के प्रति दाम्पत्य विषयक रति का समर्थन करती है। कवि बिनोदीलाल (र० काल सं० १७५०) भगवान् नेमीश्वर के परम भक्त थे। उनका अधिकांश साहित्य नेमिनाथ के चरणों में ही समर्पित हुआ है। इस संबन्ध में उनकी रचनायें विशिष्ट हैं। उनकी कृतियों में प्रसाद गुण तो है ही, चित्रांकन भी है। एक-एक चित्र हृदय को छूता है। कवि को जन्म से ही भक्त हृदय मिला था। उनकी कृतियों में शृंगार और भक्ति का समन्वय हुआ है तथा तन्मयता का भाव सर्वत्र पाया जाता है। 'नेमि-राजुल बारहमासा' 'नेमि-ब्याह' 'राजुल-पच्चीसी', 'नेमिनाथ जी का मंगल' (रचना काल १७४४), 'नेमजी का रेखता' आदि उनकी रचनायें नेमिनाथ-राजुल के प्रसिद्ध कथानक से संबन्धित है। रामविजय दयासिंह के शिष्य थे। उनका समय १८ वीं शती विक्रम है। उनकी राजस्थानी हिन्दी की 'नेमिनाथ रासो नामक रचना प्राप्त है।[3]

कवि भवानीदास (रचना काल सं० १७९१ से सं० १८२८ तक) की 'नेमिनाथ बारहमासा' (१२ पद्य), 'नेमिहिण्डोलना'[4] (८ पद्य), 'राजमति हिण्डोलना' (८ पद्य) और 'नेमिनाथ राजीमती गीत' (८ पद्य) नामक रचनायें इस कथानक से संबंधित मिलती हैं। अजयराज पाटनी की भी 'नेमिनाथ चरित' नामक एक रचना मिलती है। इसकी रचना सं० १७९३[4] में हुई थी। २६४ पद्यों की यह एक महत्त्वपूर्ण कृति है। जिनेन्द्र भूषण ने सं० १८०० में इसी कथानक को लेकर 'नेमिनाथ पुराण' की रचना की थी। इसी प्रकार झुनकलाल ने सं० १८४३ में 'नेमिनाथ ।वेवाहलों' (गरबा ढाल २२), कवि मनरंगलाल ने सं० १८८३ में 'नेमि चन्द्रिका'[5], ऋषभविजय ने सं० १८८६ में 'नेमिनाथ विवाहलो', भागचन्द्र जैन ने सं० १९०७ में 'नेम पुराण की कथा वचनिका', पं० बखतावर मल, दिल्ली निवासी ने सं० १९०९ में 'नेमिनाथ पुराण भाषा' तथा केवलचन्द्र ने सं० १९२९ में 'नेमिनाथ विवाह' नामक रचना का प्रणयन किया।

---

१. इनकी साधु अवस्था का नाम महिम समुद्र था और इनकी कृति का अन्य नाम 'नेमिनाथ बारहमासा' भी है।

२. इन कविवर के श्री अगरचन्द नाहटा तथा डॉ० प्रेमसागर जैन द्वारा दिये गये परिचयों में कुछ अन्तर है। वस्तुतः यह वाचक शांति हर्ष के ही शिष्य थे।

३. १८वीं शती की निम्न रचनाओं का और उल्लेख प्राप्त होता है—कवि केसवदास कृत नेमिराजुल बारहमासा' (सं—१७३४), ब्रह्मनाथ कृत नेमीश्वर राजमती को ब्याहुलों' (सं० १७२८) तथा 'नेमजी की लूहरि', नेमिचन्द कृत 'नेमिसुर राजमती की लूहरि', 'नेमिसुर को गीत' तथा 'नेमिश्वर रास (सं० १७६९), सेवक कवि कृत 'नेमिनाथ जी का दस भव वर्णन', धर्मवर्णन कृत 'नेमि राजुल बारहमासा' तथा विनयचन्द कृत 'नेमि राजीमती बारहमासा और 'रहनेमि राजुल सज्झाय' नामक दो कृतियाँ।

४. एक लेखक महोदय ने इकना रचना काल सं० १७३५ दिया है जो निश्चय ही अशुद्ध है।

५. किसी अज्ञात रचयिता की 'नेम चन्द्रिका' नामक सं० १७६१ में रचित एक अन्य कृति भी मिलती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२० वीं शती के ही विनयचन्द्र ने 'नेमजी को व्यावलो' एवं 'नेमनाथ बारह मासियां', खेतसी साह ने 'नेमजी की लूहरि', यतीन्द्र सूरि के सुयोग्य शिष्य विद्याचन्द्र सूरि ने 'भगवान् नेमिनाथ' नामक महाकाव्य, पं० काशीनाथ जैन ने 'राजीमती' एवं 'नेमिनाथ चरित्र' और दौलतसिंह अरविन्द ने 'राजीमति' नामक कृतियों की रचना की। आदर्श महासती राजुल ('मुनी महेन्द्रकुमार 'कमल') कणरुासिन्धु नेमि नाथ और पतिव्रता राजुल (नैन मल जैन,') नेमि राजुल संवाद (पं० गुलाबचन्द जैन) 'सती राजमती' (जवाहर लाल जी महाराज) आधुनिक समय की प्रसिद्ध रचनाएँ है।

कुछ अन्य रचनाओं का भी उल्लेख प्राप्त होता है किन्तु उनके संबन्ध में आवश्यक जानकारी का अभाव है। 'राजिल पचीसी' (आनन्द जैन कृत), 'राजुल पचीसा' (रचयिता अज्ञात), 'राजुलपच्चीसो' (रचयिता अज्ञात लि० का० सं० १८८६), 'नेमनाथ जी के कड़े' (रचयिता अज्ञात), 'नेमिनाथ विवाहलो' (रचयिता अज्ञात), 'नेमनाथ ब्याहला' (मोहनलाल कृत), 'नेमनाथ राजमती मंगल' (जिनदास कृत लि० का० सं० १८०६), 'नेमनाथ की धमाल' (गजानन्दकृत) आदि ऐसे ही ग्रन्थ हैं। इन रचनाओं के अलावा 'नेमिनाथ एवं राजुल' के विवाह-प्रसग को लेकर और भी कृतियों का रचा जाना संभाव्य है। उनकी भी खोज होनी चाहिए। साथ ही, इन रचनाओं के अतिरिक्त कुछ ऐसी रचनायें भी हैं, जो सीधे नेमिनाथ एवं राजमती के चरित्र से तो संबन्धित नहीं हैं किन्तु उनमें प्रसंग-वश नेमिनाथ तथा राजुल के चरित्र का भी पर्याप्त उल्लेख हआ है। ऐसे ग्रन्थ 'पाण्डव पुराण', 'हरिवंश पुराण' तथा वरांग चरित्र, आदि की परम्परा में प्राप्त होते हैं। ये प्रासंगिक ग्रन्थ भी महत्त्वपूर्ण हैं।[1] इस प्रकार स्पष्ट है कि नमीश्वर और राजुल के कथानक को लेकर हिन्दी के जैनभक्त कवि विप्रलम्भ के उस स्वरूप को प्रकट करते रहे हैं जिसमें वैराग्य की प्रधानता है। उन्होंने हिन्दी जैन साहित्य में प्रेम की रीति का निर्वाह इसी प्रसंग-विशेष को आधार बनाकर किया है, जो अपने में विलक्षणता से युक्त है।

राससाहित्य एवं जनभाषा

भारतीयरास साहित्य के मर्मज्ञ अध्येता डॉ० दशरथ ओझा के अनुसार राससाहित्य का निर्माण भारत के एक बड़े विस्तृत भू-भाग में होता रहा। आसाम से राजस्थान तक न्यूनाधिक एक सहस्र वर्ष तक इस साहित्य का सृजन साधुमहात्माओं एवं मेधावी कवि समाज द्वारा हुआ। वैष्णव संतों ने रास का संबंध कृष्ण और गोपियों से स्थापित किया और जैन मुनियों ने रास की रचना भगवान् महावीर और उनके उपासकों के पावन-चरित्र के आधार पर की।

रास साहित्य मे जनसाधरण के प्रयोग में आनेवाली भाषा को ही प्रमुखता दी गई है। डॉ० दशरथ ओझा के अनुसार तो जनभाषा में रचना करने वाले जैन मुनि संस्कृत प्राकृत और अपभ्रंश के परम विद्वान् होते हुए भी चरित्राकांक्षी बाल, स्त्री, मूढ़ और मूर्खों पर अनुग्रह करके जनभाषा में रचना करते थे। रासग्रन्थ उन्हीं जन-कृपालु सर्वहिताकांक्षी मुनियों और कवियों के प्रयास का परिणाम है।

डॉ० दशरथ ओझा के अनुसार रास साहित्य की भाषा, छंद एवं वर्ण्य विषय का अध्ययन हिन्दी साहित्य के इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ सकता है। उनकी दृष्टि में जन-साधारण की काव्य रूचि, उसकी भाषा के स्वरूप, उसके जीवन-विवेचन आदि का बोध कराने वाला यह प्रचुर साहित्य ज्यों-ज्यों प्रकाश में आता जायेगा, त्यों-त्यों हमारा साहित्य समृद्ध बनता जायगा।

□सम्पादक

१. 'शील रासा' और 'चुनड़ीगीत' जैसी रूपकात्मक कृतियों में भी नेमिनाथ—चरित्र को माध्यम बनाया गया है। यह एक रूपक गीत है। चुनड़ी (राजस्थान का विशेष वस्त्र) नामक उत्तरीय वस्त्र को रूपक बनाकर गीत-काव्य के रूप में रचना की जाती है। 'शील रासा में राजुल के माध्यम से शील के महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org